



Neutral Citation No. - 2026:AHC:6411

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

रिट - ए संख्या - 18344 वर्ष 2025

श्रीमती मीना श्रीवास्तव

.....याचिकाकर्ता(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और 4 अन्य

.....प्रत्यर्थी(गण)

याचिकाकर्ता(गण) के अधिवक्ता : राम दयाल तिवारी, वरिष्ठ अधिवक्ता, वैभव गोस्वामी

प्रत्यर्थी(गण) के अधिवक्ता : मुख्य स्थायी अधिवक्ता

न्यायालय संख्या - 33

माननीय न्यायमूर्ति विकास बुधवार

1. याचिकाकर्ता की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री एम.डी. सिंह शेखर, उनके सहायक विद्वान अधिवक्ता श्री वैभव गोस्वामी और राज्य की ओर से विद्वान स्थायी अधिवक्ता श्री मनीष कुमार की दलीलें सुनी गईं।
2. श्री मनीष कुमार ने न्यायालय में बयान दिया है कि दिनांक 05.12.2025 के आदेश पारित होने के बाद, उन्होंने उत्तर प्रदेश सरकार के अवर सचिव के हस्ताक्षरों के तहत दिनांक 19.12.2025 को निर्देश प्राप्त किए हैं। उन्होंने आगे बयान दिया है कि वे कोई शपथपत्र दाखिल करने का प्रस्ताव नहीं रखते हैं और रिट याचिका का निर्णय अभिलेख पर उपलब्ध दस्तावेजों के आधार पर किया जाए।
3. पक्षकारों की सहमति से, रिट याचिका पर प्रारंभिक चरण में निर्णय लिया जा रहा है।
4. याचिकाकर्ता का मामला यह है कि उन्हें 20.10.1997 को समाज कल्याण विभाग में अध्यक्ष के पद पर नियुक्त किया गया था और उसके बाद 03.03.2008 को जिला समाज कल्याण अधिकारी के पद पर पदोन्नत किया गया। याचिकाकर्ता का दावा है कि उनका तबादला एक स्थान से दूसरे स्थान पर होता रहा। हालांकि, कुछ आरोपों के कारण, याचिकाकर्ता को 22.01.2013 को एक आरोप पत्र सौंपा गया जिसमें 8 आरोप शामिल थे। याचिकाकर्ता ने 05.12.2017 को आरोपों

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



का खंडन करते हुए जवाब दाखिल किया। 29.05.2018 को एक जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की गई जिसमें उन्हें सभी आरोपों से बरी कर दिया गया। हालांकि, उत्तर प्रदेश राज्य के प्रधान सचिव ने दिनांक 17.05.2019 के पत्र द्वारा याचिकाकर्ता को सूचित किया कि दिनांक 29.05.2018 को प्रस्तुत जांच रिपोर्ट को अस्वीकार कर दिया गया है और छत्रपति साहूजी महाराज शोध प्रकाशन संस्थान, लखनऊ के संयुक्त निदेशक को जांच अधिकारी नियुक्त किया गया है। दिनांक 02.03.2021 को एक जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की गई जिसमें आरोप संख्या 3, 4, 7 और 8 सिद्ध पाए गए तथा आरोप संख्या 1, 2, 5 और 6 सिद्ध नहीं पाए गए। दिनांक 26.03.2021 को याचिकाकर्ता को कारण बताओ नोटिस/जांच रिपोर्ट पर अपना उत्तर प्रस्तुत करने के लिए पत्र भेजा गया। याचिकाकर्ता ने दिनांक 23.06.2021 को अपना उत्तर प्रस्तुत किया और उसके बाद दिनांक 06.11.2025 को प्रथम प्रतिवादी द्वारा याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्त करने का आदेश पारित किया गया तथा वसूली का आदेश भी पारित किया गया।

5. दिनांक 06.11.2025 के आदेश पर सवाल उठाते हुए यह रिट याचिका दायर की गई है।

6. इस न्यायालय ने दिनांक 05.12.2025 को रिट याचिका पर सुनवाई करते हुए निम्नलिखित आदेश पारित किए:-

"1. आज दाखिल किए गए निर्देश को परिशिष्ट 'ए' के रूप में अभिलेख में दर्ज किया गया है।

2. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि आक्षेपित आदेश को बरकरार नहीं रखा जा सकता, विशेषकर तब जब पहली बात तो यह है कि याचिका के अनुच्छेद संख्या 18 में उल्लिखित गंभीर दंड लगाने से पहले कोई मौखिक जांच नहीं की गई थी। आगे उन्होंने प्रस्तुत किया है कि इससे पहले देवी पाटन मंडल, गोंडा के अतिरिक्त आयुक्त, प्रशासन द्वारा एक जांच की गई थी, जिसमें कुछ भी प्रतिकूल नहीं पाया गया था। बाद में, पद में निचले स्तर के संयुक्त निदेशक को अब जांच करने के लिए नियुक्त किया गया है। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि सक्षम प्राधिकारी के पास मामले की पुनः जांच का निर्देश देने के लिए ठोस और तर्कसंगत कारण नहीं थे।

3. श्री मनीष कुमार, विद्वान स्थायी अधिवक्ता, निर्देशों के आधार पर, आगे का समय मांगते हैं क्योंकि निर्देशों में दिए गए आधार न्यायालय द्वारा उठाए गए प्रश्न का उत्तर नहीं देते हैं।

4. इसे 16.12.2025 को नए मामले के रूप में प्रस्तुत किया जाय।

5. इस बीच, विद्वान स्थायी अधिवक्ता को निर्देश प्राप्त करने होंगे।"

7. यह निर्देश विद्वान स्थायी अधिवक्ता द्वारा निदेशक, समाज कल्याण अधिकारी के हस्ताक्षरों के अंतर्गत प्रस्तुत किया गया है और इसे परिशिष्ट 'सी' के रूप में चिह्नित किया गया है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



8. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क देने का प्रयास किया है कि आक्षेपित आदेश को एक भी क्षण के लिए बरकरार नहीं रखा जा सकता, विशेषकर जब एक बार विभागीय आरोप पत्र जारी कर दिया गया और एक जांच अधिकारी नियुक्त कर दिया गया, तो जांच अधिकारी मौखिक जांच करने के लिए बाध्य था, भले ही उन मामलों में मौखिक जांच की मांग न की गई हो। यह प्रस्तुत किया गया है कि उत्तर प्रदेश सरकारी कर्मचारी (अनुशासन और अपील) नियमावली, 1999 का नियम 7 स्वयं एक मौखिक जांच का प्रावधान करता है। आगे यह प्रस्तुत किया गया है कि जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोपों को साबित करने के उत्साह में, आरोप पत्र जारी होने और उत्तर प्रस्तुत होने के बाद, याचिकाकर्ता को उन गवाहों से जिरह करते समय अपना पक्ष रखने का अवसर दिए बिना ही जांच रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी, जिनके आधार पर आरोपों को सिद्ध माना गया था। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने पेपर-बुक के पैराग्राफ संख्या 18 और 20 पर भरोसा करते हुए यह तर्क दिया है कि कोई मौखिक जांच नहीं की गई थी। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि 29.05.2018 को याचिकाकर्ता को आरोपों से बरी करते हुए जांच रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने और 17.05.2019 को जांच अधिकारी द्वारा नई जांच करने का आदेश पारित किए जाने के बाद दोबारा जांच करने का कोई अवसर नहीं था। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि अन्यथा भी, याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोप सिद्ध नहीं माने जा सकते और कुछ आरोप आपराधिक विचारण के विषय हैं। वह इस संबंध में **गिरीश चंद्र श्रीवास्तव बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य, 2017(2) ए.डी.जे. 41** के मामले में इस न्यायालय के एक खंडपीठ के निर्णय पर भरोसा करना चाहता है।

9. विद्वान स्थायी अधिवक्ता श्री मनीष कुमार ने याचिकाकर्ता के वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा दिए गए तर्कों का खंडन करते हुए प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता के वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा उठाए गए सभी तर्क निराधार हैं, विशेषकर तब जब आरोप बड़े और गंभीर हों और नियोक्ता/नियुक्ति प्राधिकारी के लिए यह हमेशा खुला रहता है कि यदि उसे यह लगता है कि पिछली जांच विधि के अनुसार नहीं थी, तो वह दूसरी जांच कराने का आदेश पारित कर सकता है। उन्होंने आगे कहा कि याचिकाकर्ता ने कदाचार किया है और इसीलिए उसे इसके परिणाम भुगतने होंगे। हालांकि, वे इस तथ्य से इनकार नहीं कर सके कि कोई मौखिक जांच नहीं की गई, जो उत्तर प्रदेश सरकारी कर्मचारी (अनुशासन और अपील) नियमावली, 1999 के नियम 7 के तहत अनिवार्य थी। उन्होंने प्रस्तुत किया कि आदेश को रद्द किया जाए। मामले को आरोप पत्र प्रस्तुत करने और उसके जवाब दाखिल करने के चरण से जांच करने के लिए वापस भेजा जाए।



10. मैंने न्यायालय के समक्ष उठाए गए सभी तर्कों को सुना है और अभिलेख का ध्यानपूर्वक अवलोकन किया है।

11. तथ्य कोई मुद्दा नहीं हैं। यह भी कोई मुद्दा नहीं है कि याचिकाकर्ता एक सरकारी कर्मचारी है, जिसके विरुद्ध विभागीय कार्यवाही की गई थी। दिनांक 22.01.2013 को आठ आरोपों वाला आरोपपत्र जारी होने के बाद, याचिकाकर्ता ने दिनांक 05.12.2016 को अपना जवाब प्रस्तुत किया और जांच अधिकारी ने दिनांक 29.05.2018 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की, जो स्वीकार्य नहीं पाई गई और 17.05.2019 को एक नए जांच अधिकारी की नियुक्ति का आदेश पारित किया गया, जिसने जांच की और दिनांक 21.03.2021 को जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसमें आरोप संख्या 3, 4, 7 और 8 को साबित तथा आरोप संख्या 1, 2, 5 और 6 को नासाबित पाया गया। याचिकाकर्ता का दावा है कि उसने कारण बताओ नोटिस/जांच रिपोर्ट का जवाब दिनांक 23.06.2021 को प्रस्तुत किया था और चार वर्ष से अधिक की अवधि के बाद अब आक्षेपित आदेश पारित किया गया है। महत्वपूर्ण बात यह है कि दिनांक 02.03.2021 की जांच रिपोर्ट का सरसरी तौर पर अध्ययन करने से पता चलता है कि इसमें कई पृष्ठ आरोपों को शामिल करने और याचिकाकर्ता के जवाब का उल्लेख करने के लिए समर्पित हैं, लेकिन जांच रिपोर्ट या अनुशासनात्मक प्राधिकारी के आदेश में ऐसा कुछ भी दर्ज नहीं है जिससे यह पता चले कि मौखिक जांच की गई थी। उत्तर प्रदेश सरकार के कर्मचारी (अनुशासन और अपील) नियम, 1999 का नियम 7 इस प्रकार है:-

"7- गंभीर दंड लगाने की प्रक्रिया- किसी सरकारी कर्मचारी पर कोई बड़ा दंड लगाने से पहले, निम्नलिखित तरीके से जांच की जाएगी:

(i) अनुशासनात्मक प्राधिकारी स्वयं आरोपों की जांच कर सकता है या आरोपों की जांच के लिए अपने अधीनस्थ किसी प्राधिकारी को जांच अधिकारी नियुक्त कर सकता है।

(ii) जिन तथ्यों के आधार पर दुराचार के मामले में कार्रवाई प्रस्तावित है, उन्हें एक निश्चित आरोप या आरोपों के रूप में दर्ज किया जाएगा, जिसे आरोपपत्र कहा जाएगा। आरोपपत्र को अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा अनुमोदित किया जाएगा।

बशर्ते कि जहां नियुक्ति प्राधिकारी राज्यपाल हो, वहां आरोप पत्र को संबंधित विभाग के प्रधान सचिव या सचिव द्वारा अनुमोदित किया जा सकता है।

(iii) आरोप पत्र इतना सटीक और स्पष्ट होना चाहिए कि आरोपी सरकारी कर्मचारी को उसके विरुद्ध तथ्यों और परिस्थितियों का पर्याप्त संकेत मिल सके। आरोप पत्र में प्रस्तावित दस्तावेजी



साक्ष्य और उन्हें साबित करने के लिए प्रस्तावित गवाहों के नाम, साथ ही यदि कोई मौखिक साक्ष्य हो, तो उसका उल्लेख किया जाना चाहिए।

(iv) आरोपित सरकारी कर्मचारी को निर्धारित तिथि पर व्यक्तिगत रूप से लिखित बयान प्रस्तुत करना होगा, जो आरोप पत्र जारी होने की तिथि से कम से कम 15 दिन की होगी। बयान में यह भी बताना होगा कि क्या वह आरोप पत्र में उल्लिखित किसी गवाह से जिरह करना चाहता है या अपने बचाव में कोई साक्ष्य प्रस्तुत करना चाहता है। उसे यह भी सूचित किया जाएगा कि यदि वह निर्धारित तिथि पर उपस्थित नहीं होता है या लिखित बयान प्रस्तुत नहीं करता है, तो यह मान लिया जाएगा कि उसके पास प्रस्तुत करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है और जांच अधिकारी एकतरफा जांच पूरी करेगा।

(v) आरोपपत्र, उसमें उल्लिखित दस्तावेजी साक्ष्यों की प्रति और गवाहों की सूची एवं उनके बयानों (यदि कोई हो) सहित, आरोपित सरकारी कर्मचारी को व्यक्तिगत रूप से या पंजीकृत डाक द्वारा आधिकारिक अभिलेखों में उल्लिखित पते पर भेजा जाएगा। यदि आरोपपत्र उपरोक्त तरीके से नहीं भेजा जा सकता है, तो उसे व्यापक प्रसार वाले दैनिक समाचार पत्र में प्रकाशित करके भेजा जाएगा।

बशर्ते कि जहां दस्तावेजी साक्ष्य प्रचुर मात्रा में हो, वहां आरोप पत्र के साथ उसकी प्रति प्रस्तुत करने के बजाय, आरोपी सरकारी कर्मचारी को जांच अधिकारी के समक्ष उसका निरीक्षण करने की अनुमति दी जाएगी।

(vi) यदि आरोपित सरकारी कर्मचारी उपस्थित होकर आरोपों को स्वीकार करता है, तो जांच अधिकारी इस स्वीकारोक्ति के आधार पर अनुशासनात्मक प्राधिकारी को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा।

(vii) यदि आरोपित सरकारी कर्मचारी आरोप का खंडन करता है, तो जांच अधिकारी आरोप पत्र में प्रस्तावित गवाहों को बुलाएगा और आरोपित सरकारी कर्मचारी की उपस्थिति में उनके मौखिक साक्ष्य दर्ज करेगा, जिसे ऐसे गवाहों से जिरह करने का अवसर दिया जाएगा। उपरोक्त साक्ष्य दर्ज करने के बाद, जांच अधिकारी आरोपित सरकारी कर्मचारी द्वारा अपने लिखित बयान में बचाव में प्रस्तुत किए जाने की इच्छा व्यक्त किए गए मौखिक साक्ष्य को बुलाएगा और दर्ज करेगा।

बशर्ते कि जांच अधिकारी लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से किसी गवाह को बुलाने से इनकार कर सकता है।



(viii) जांच अधिकारी उत्तर प्रदेश विभागीय जांच (गवाहों की उपस्थिति और दस्तावेजों के प्रस्तुतीकरण का प्रवर्तन) अधिनियम 1976 के प्रावधानों के अनुसार किसी भी गवाह को साक्ष्य देने के लिए बुला सकता है या किसी भी व्यक्ति को अपने समक्ष दस्तावेज प्रस्तुत करने के लिए कह सकता है।

(ix) जांच अधिकारी किसी भी समय, किसी भी गवाह से या आरोपित व्यक्ति से, सत्य का पता लगाने या आरोपों से संबंधित तथ्यों के उचित प्रमाण प्राप्त करने के उद्देश्य से, कोई भी प्रश्न पूछ सकता है।

(x) यदि आरोपित सरकारी कर्मचारी जांच के लिए निर्धारित तिथि पर या कार्यवाही के किसी भी चरण में नोटिस तामील होने के बावजूद या तिथि की जानकारी होने के बावजूद उपस्थित नहीं होता है, तो जांच अधिकारी एकतरफा जांच करेगा। ऐसे मामले में, जांच अधिकारी आरोपित सरकारी कर्मचारी की अनुपस्थिति में आरोप पत्र में उल्लिखित गवाहों के बयान दर्ज करेगा।

(xi) अनुशासनात्मक प्राधिकारी, यदि वह आवश्यक समझे तो, एक आदेश द्वारा किसी सरकारी कर्मचारी या कानूनी व्यवसायी को "प्रस्तुतकर्ता अधिकारी" के रूप में नियुक्त कर सकता है, जो आरोप के समर्थन में उसकी ओर से मामला प्रस्तुत करेगा।

(xii) सरकारी कर्मचारी इस मामले को प्रस्तुत करने के लिए किसी अन्य सरकारी कर्मचारी की सहायता ले सकता है, लेकिन इस उद्देश्य के लिए किसी कानूनी व्यवसायी को नियुक्त नहीं कर सकता, जब तक कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा नियुक्त प्रस्तुतकर्ता अधिकारी मामले की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अनुशासनात्मक प्राधिकारी का कानूनी व्यवसायी न हो।

परंतु यह नियम निम्नलिखित मामलों में लागू नहीं होगा:

(i) जहां किसी व्यक्ति पर उसके आचरण के आधार पर कोई बड़ी सजा लगाई जाती है, जिसके कारण उसे आपराधिक आरोप में दोषी ठहराया गया हो; या

(ii) जहां अनुशासनात्मक प्राधिकारी इस बात से संतुष्ट है कि लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों से इन नियमों में निर्धारित तरीके से जांच करना यथोचित रूप से व्यावहारिक नहीं है; या

(iii) जहां राज्यपाल संतुष्ट हो कि राज्य की सुरक्षा के हित में, इन नियमों में निर्धारित तरीके से जांच करना उचित नहीं है।

12. वास्तव में, नियम 3 में सजा का वर्णन है जिसे बड़ी और छोटी सजाओं में वर्गीकृत किया गया है। हालांकि, सेवा से बर्खास्तगी, जो भविष्य में रोजगार के लिए अयोग्य ठहराती है, एक बड़ी



सजा है और नियम 7 में बड़ी सजाओं को लागू करने की प्रक्रिया का वर्णन है, जिसके अनुसार आरोप पत्र जारी किया जाना है, दोषी से जवाब मांगा जाना है और यदि दोषी आरोपों से इनकार करता है, तो एक पूर्ण जांच की जानी है, अर्थात् जांच अधिकारी की नियुक्ति, मौखिक जांच सहित जांच करना, जांच रिपोर्ट प्रस्तुत करना, कारण बताओ नोटिस जारी करना, कारण बताओ नोटिस का जवाब देना या आदेश पारित करना। वर्तमान मामले में, न्यायालय ने पाया कि यद्यपि जांच अधिकारी की नियुक्ति की गई थी और उसने जांच की थी, लेकिन उसने मौखिक जांच नहीं की जो अनिवार्य है। अभिलेख में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह पता चले कि याचिकाकर्ता ने मौखिक जांच के लिए अपनी अनिच्छा दिखाई थी। **गिरीश चंद्र श्रीवास्तव (उपरोक्त)** पैरा 14, 15, 16, 20 और 22 में निम्नलिखित प्रेक्षित किया गया:-

"14. हममें से एक (न्यायमूर्ति सुधीर अग्रवाल) ने राजेश प्रसाद मिश्रा बनाम आयुक्त, झांसी प्रभाग, झांसी और अन्य, 2010 (1) यूपीएलबीईसी 216 में विस्तृत विश्लेषण के बाद निम्नलिखित टिप्पणी की:

“अब इस सवाल पर आते हैं कि मौखिक जांच न कराने का क्या प्रभाव होता है। मेरा मानना है कि जिस मामले में जांच अधिकारी नियुक्त किया जाता है, उसमें मौखिक जांच अनिवार्य है। आरोप पत्र दाखिल करने मात्र से ही आरोप स्वतः सिद्ध नहीं मान लिए जाते, जब तक कि विभाग द्वारा जांच अधिकारी के समक्ष उन्हें सिद्ध न कर दिया जाए और इसके बाद ही दोषी कर्मचारी को अपना बचाव प्रस्तुत करने का अवसर मिलता है। गंभीर दंड लगाने से पहले मौखिक जांच कराना अनिवार्य है, जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय ने उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम टी.पी. लाल श्रीवास्तव, 1997 (1) एलएलजे 831 और साथ ही इस न्यायालय की एक खंडपीठ द्वारा सुभाष चंद्र शर्मा बनाम प्रबंध निदेशक और अन्य, 2000 (1) यूपीएलबीईसी 541 के मामले में धारित किया है।

15. सुभाष चंद्र गुप्ता बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2012 (1) यूपीएलबीईसी 166 के एक अन्य मामले में, इस न्यायालय की खंडपीठ ने इस मुद्दे पर कानून का सर्वेक्षण करने के बाद निम्नलिखित अवलोकन किया:

“यह सुस्थापित है कि जब कानून किसी कार्य को एक विशेष तरीके से करने का निर्देश देता है, तो उस कार्य को उसी तरीके से किया जाना चाहिए। हमारा यह मत है कि किसी जांच के लिए निर्धारित नियमों के अनुसार न की गई जांच के आधार पर दी गई कोई भी सजा कानून की दृष्टि में मान्य नहीं है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



हमारा यह भी मत है कि बड़ी सजा देने के लिए जांच नियमों के तहत निर्धारित प्रक्रिया अनिवार्य है और जब तक इन प्रक्रियाओं का पालन नहीं किया जाता, तब तक इससे प्राप्त कोई भी निष्कर्ष निरर्थक होगा, जब तक कि आरोप इतने स्पष्ट और अकाट्य न हों कि उन्हें साबित करने की आवश्यकता ही न हो। हमारे इस मत को सर्वोच्च न्यायालय के स्टेट ऑफ यूपी और अन्य बनाम टी.पी.लाल श्रीवास्तव, 1997 (1) एलएलजे 831 के निर्णय और इस न्यायालय की एक खंडपीठ के सुभाष चंद्र शर्मा बनाम प्रबंध निदेशक और अन्य, 2000 (1) यूपीएलबीईसी 541 के निर्णय से समर्थन मिलता है।

इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने सलाहुद्दीन अंसारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य, 2008 (3) ईएससी 1667 के मामले में धारित किया कि मौखिक जांच न करना एक गंभीर त्रुटि है जो अनुशासनात्मक कार्यवाही के आदेश को, जिसमें दंड का आदेश भी शामिल है, अमान्य कर सकती है, और निम्नलिखित टिप्पणी की है:

"10..... ऐसे मामले में मौखिक जांच न करना एक गंभीर मामला है और यह मामले की जड़ तक जाता है।

11. इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने सुभाष चंद्र शर्मा बनाम प्रबंध निदेशक एवं अन्य, 2000 (1) यूपीएलबीईसी 541 में, मौखिक जांच आवश्यक है या नहीं, इस प्रश्न पर विचार करते हुए यह धारित किया कि यदि मौखिक जांच नहीं की जाती है, तो यह दोषी कर्मचारी के लिए प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन है। उपरोक्त दृष्टिकोण को सुभाष चंद्र शर्मा बनाम यू.पी. कोऑपरेटिव स्पिनिंग मिल्स एवं अन्य, 2001 (2) यूपीएलबीईसी 1475 और लातुरी सिंह बनाम यू.पी. पब्लिक सर्विस ट्रिब्यूनल एवं अन्य, रिट याचिका संख्या 12939/2001, दिनांक 06.05.2005 को दिए गए निर्णय में दोहराया गया।

16. यदि कर्मचारी जांच में भाग लेने से इनकार करता है, तब भी नियोक्ता उसे सीधे बर्खास्त नहीं कर सकता, बल्कि उसे एकतरफा जांच करनी होगी जिसमें साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने चाहिए, देखें-इंपीरियल टोबैको कंपनी लिमिटेड बनाम उसके कर्मचारी, एआईआर 1962 एससी 1348, उमा शंकर बनाम रजिस्ट्रार, 1992 (65) एफएलआर 674 (ऑल)।

.....

20. यह सर्वविदित कानून है कि विभागीय कार्यवाही अर्ध-न्यायिक कार्यवाही होती है। जांच अधिकारी अर्ध-न्यायिक अधिकारी के रूप में कार्य करता है। वह केवल विभाग का प्रतिनिधि नहीं होता। उसे सत्य का पता लगाने के लिए एक स्वतंत्र और निष्पक्ष अधिकारी के रूप में कार्य करना होता है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



किसी कर्मचारी को दी गई बड़ी सजा के गंभीर नागरिक परिणाम होते हैं, इसलिए विभागीय कार्यवाही प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप होनी चाहिए। यदि कोई कर्मचारी जांच में भाग नहीं लेना चाहता है, तब भी विभाग को मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत करके कर्मचारी के विरुद्ध आरोपों को सिद्ध करना होगा। यदि आरोप बड़ी सजा के योग्य हैं, तो गवाहों को पेश करके मौखिक साक्ष्य देना आवश्यक है।

....

22. वर्तमान मामले में प्रतिवादियों का कहना है कि याचिकाकर्ता को अवसर दिए जाने के बावजूद उसने जांच में भाग नहीं लिया। यदि उक्त कथन को सही भी मान लिया जाए, तब भी विभाग पर आरोपों को साबित करने का दायित्व समाप्त नहीं होता।

13. इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि मौखिक जांच नहीं की गई है और उक्त कमी मामले की जड़ तक जाती है, अतः आक्षेपित आदेश को बरकरार नहीं रखा जा सकता और इसे अपास्त किया जाना चाहिए। तदनुसार, रिट याचिका का निर्णय निम्नलिखित शब्दों में किया जा रहा है:-

(a) उत्तर प्रदेश के लखनऊ स्थित समाज कल्याण विभाग के अतिरिक्त आयुक्त द्वारा दिनांक 06.11.2025 को पारित आदेश को अपास्त किया जाता है।

(b) मामले को अनुशासनात्मक प्राधिकारी/जांच अधिकारी को वापस भेज दिया गया है ताकि यदि वह चाहे तो आरोप पत्र प्रस्तुत करने से लेकर जवाब देने तक के चरण से नए सिरे से जांच कर सके।

(c) यदि जांच की जाती है, तो आदेश की प्रमाणित प्रति प्रस्तुत किए जाने की तिथि से तीन महीने की अवधि के भीतर जांच पूरी कर ली जाएगी।

(d) यदि जांच कार्यवाही आयोजित की जाती है, तो सभी परिणामी लाभों की पात्रता जांच कार्यवाही के अंतिम परिणाम के अधीन होगी।

14. श्री एम.डी. सिंह शेखर, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि यदि जांच कराने का निर्णय लिया जाता है, तो रिट याचिकाकर्ता जांच में भाग लेगा।

15. उपरोक्त टिप्पणियों के साथ, रिट याचिका का **निस्तारण** किया जाता है।

9 जनवरी, 2026

एन.एस.राठौर

(न्यायमूर्ति विकास बुधवार)